Global Journal of Sociology and Anthropology
Vol. 14 (1), pp. 01-07, December, 2025
ISSN: 2756-3456

मल्टीमीडिया उपयोग और किशोरों के सामाजिक समायोजन एवं आक्रामक व्यवहार के मध्य संबंध: एक अध्ययन

मनीषा शुक्ला[1], डॉ. चंद्र दीप प्रसाद[2]
शोधार्थी, मनोविज्ञान विभाग, भारती विश्वविद्यालय, दुर्ग, छत्तीसगढ़[1]
पर्यवेक्षक, मनोविज्ञान विभाग, भारती विश्वविद्यालय, दुर्ग, छत्तीसगढ़[2]

सारांश

वर्तमान डिजिटल युग में मल्टीमीडिया किशोरों के जीवन का अभिन्न अंग बन चुका है। स्मार्टफोन, सोशल मीडिया, वीडियो गेम्स और ओटीटी प्लेटफॉर्म्स की सर्वसुलभता ने किशोरावस्था के मनोसामाजिक विकास को गहराई से प्रभावित किया है। यह समीक्षा शोधपत्र पिछले दो दशकों में हुए अध्ययनों का मेटा-विश्लेषणात्मक अवलोकन प्रस्तुत करता है, जिसमें मल्टीमीडिया एक्सपोज़र और किशोरों के मानसिक स्वास्थ्य, सामाजिक समायोजन तथा आक्रामक व्यवहार के बीच के अंतर्संबंधों की पड़ताल की गई है। साहित्य से स्पष्ट होता है कि अत्यधिक स्क्रीन-टाइम चिंता, अवसाद और नींद संबंधी विकारों से जुड़ा पाया गया है, जबकि हिंसक कंटेंट का बार-बार संपर्क आक्रामकता की प्रवृत्तियों को बढ़ावा दे सकता है। साथ ही, कुछ अध्ययन यह भी बताते हैं कि संतुलित एवं शैक्षणिक मल्टीमीडिया उपयोग सामाजिक कौशल तथा संज्ञानात्मक विकास में सहायक सिद्ध होता है। इस विरोधाभास को समझने के लिए अध्ययन पद्धतियों, नमूना आकार, सांस्कृतिक संदर्भ और मापन उपकरणों में भिन्नता को ध्यान में रखा गया है। पेपर में पिछले शोधों की पद्धतिगत सीमाओं की आलोचनात्मक समीक्षा की गई है, जिसमें अनुदैर्घ्य अध्ययनों की कमी, आत्म-रिपोर्टेड डेटा पर अत्यधिक निर्भरता और सांस्कृतिक विविधता की उपेक्षा प्रमुख रूप से उभरकर सामने आती है। निष्कर्षतः, यह समीक्षा भविष्य के शोध हेतु एक समेकित ढांचा प्रस्तावित करती है जो मल्टीमीडिया के प्रभावों को अधिक सूक्ष्मता से समझने में सहायक होगा।

कीवर्ड्स: *मल्टीमीडिया, किशोरावस्था, मानसिक स्वास्थ्य, सामाजिक समायोजन, आक्रामक व्यवहार, स्क्रीन-टाइम, सोशल मीडिया*

1. प्रस्तावना

1.1 डिजिटल युग में किशोरावस्था का बदलता परिदृश्य

किशोरावस्था जीवन का वह संक्रमणकालीन चरण है जहाँ पहचान निर्माण, भावनात्मक नियमन और सामाजिक संबंधों की नींव पड़ती है। पिछले पंद्रह वर्षों में स्मार्टफोन और इंटरनेट की पहुँच ने इस चरण के अनुभव को मौलिक रूप से बदल दिया है[1]। जहाँ पहले किशोर मुख्यतः पारिवारिक और सामुदायिक परिवेश से प्रभावित होते थे, वहीं आज वे यूट्यूब, इंस्टाग्राम, वॉट्सऐप और ऑनलाइन गेमिंग प्लेटफॉर्म्स के माध्यम से एक वैश्विक सूचना-प्रवाह से जुड़े हुए हैं। यह बदलाव अवसर और जोखिम दोनों साथ लेकर आया है। एक ओर मल्टीमीडिया शिक्षा, रचनात्मकता और सामाजिक जुड़ाव के नए द्वार खोलता है, दूसरी ओर इसका अनियंत्रित उपयोग मानसिक स्वास्थ्य पर नकारात्मक प्रभाव डाल सकता है। भारत जैसे देश में, जहाँ इंटरनेट उपयोगकर्ताओं की संख्या तेज़ी से बढ़ रही है, यह प्रश्न और भी प्रासंगिक हो जाता है कि किशोर इस डिजिटल वातावरण से किस प्रकार प्रभावित हो रहे हैं[2]।

1.2 मानसिक स्वास्थ्य और स्क्रीन एक्सपोज़र के बीच संबंध

Global Journal of Sociology and Anthropology
Vol. 14 (1), pp. 01-07, December, 2025
ISSN: 2756-3456

अनुसंधान समुदाय में यह बहस लंबे समय से चल रही है कि क्या स्क्रीन-टाइम स्वयं में हानिकारक है, या फिर कंटेंट की प्रकृति ही निर्णायक कारक है। ट्वेंग एवं अन्य शोधकर्ताओं के अध्ययन बताते हैं कि सोशल मीडिया पर बिताया गया अत्यधिक समय किशोरियों में विशेष रूप से चिंता और अवसाद के लक्षणों से सहसंबंधित है[3]। वहीं कुछ शोधकर्ता इस दावे को अतिसरलीकृत मानते हैं और तर्क देते हैं कि उपयोग का प्रकार–जैसे निष्क्रिय स्क्रॉलिंग बनाम सक्रिय संवाद–प्रभाव की दिशा तय करता है। यह असहमति इस बात का संकेत है कि मानसिक स्वास्थ्य पर मल्टीमीडिया के प्रभाव को एक रैखिक कारण-प्रभाव मॉडल से समझना पर्याप्त नहीं होगा[4]।

1.3 सामाजिक समायोजन और आक्रामकता की समस्या

सामाजिक समायोजन, यानी किशोरों की अपने साथियों, परिवार और व्यापक समाज के साथ तालमेल बिठाने की क्षमता, भी मल्टीमीडिया के प्रभाव से अछूती नहीं रही[5]। कुछ अध्ययन बताते हैं कि अत्यधिक ऑनलाइन जुड़ाव वास्तविक जीवन के सामाजिक कौशल को कमजोर करता है, जबकि अन्य यह तर्क देते हैं कि ऑनलाइन प्लेटफॉर्म वास्तव में सामाजिक पूंजी निर्माण में सहायक हो सकते हैं, विशेषकर उन किशोरों के लिए जो पारंपरिक सामाजिक सेटिंग्स में असहज महसूस करते हैं। आक्रामक व्यवहार के संदर्भ में, बंडुरा का सामाजिक अधिगम सिद्धांत अक्सर उद्धृत किया जाता है–यह विचार कि हिंसक कंटेंट का अवलोकन अनुकरणात्मक व्यवहार को जन्म दे सकता है[6]। परंतु आज के मेटा-विश्लेषण इस सिद्धांत की सीमाओं को भी उजागर करते हैं, विशेषकर जब पूर्व-मौजूद व्यक्तित्व लक्षणों और पारिवारिक परिवेश जैसे मध्यस्थ कारकों को नज़रअंदाज़ किया जाता है। इसी जटिलता को समझने के उद्देश्य से यह समीक्षा शोधपत्र तैयार किया गया है।

2. साहित्य सर्वेक्षण

मल्टीमीडिया और किशोर मानसिक स्वास्थ्य के संबंध पर शोध की एक समृद्ध परंपरा रही है, जो मुख्यतः तीन कालखंडों में विभाजित की जा सकती है। प्रारंभिक अध्ययन, जो 2000 के दशक की शुरुआत में हुए, टेलीविज़न और वीडियो गेम्स पर केंद्रित थे[7]। एंडरसन और बुशमैन के कार्य ने हिंसक वीडियो गेम्स और आक्रामक विचारों के बीच संबंध स्थापित करने का प्रयास किया, और उनके निष्कर्षों ने अगले दशक के शोध की दिशा तय की। हालांकि, फर्ग्युसन जैसे आलोचकों ने इन अध्ययनों की पद्धति पर सवाल उठाए, विशेषकर प्रकाशन पूर्वाग्रह और छोटे प्रभाव आकार को लेकर[8]।

दूसरा कालखंड, लगभग 2010 से 2018 तक, सोशल मीडिया के उदय के साथ जुड़ा है। इस अवधि में फेसबुक, इंस्टाग्राम और स्नैपचैट जैसे प्लेटफॉर्म्स के प्रभावों पर बड़े पैमाने पर सर्वेक्षण आधारित अध्ययन हुए। ट्वेंग और कैंपबेल के कार्य ने यह तर्क प्रस्तुत किया कि स्मार्टफोन के प्रसार के साथ ही किशोरों में अवसाद और आत्महत्या के विचारों की दर में वृद्धि हुई, जिसे उन्होंने "आईजेन" पीढ़ी के संकट के रूप में वर्णित किया[9]। इसके प्रत्युत्तर में ओर्बेन और प्रज़ीबाइल्स्की ने बड़े डेटासेट्स का पुनर्विश्लेषण करते हुए तर्क दिया कि स्क्रीन-टाइम और मानसिक स्वास्थ्य के बीच सहसंबंध का आकार सांख्यिकीय रूप से नगण्य है, तथा इसकी तुलना आलू खाने या चश्मा पहनने जैसे कारकों से की। यह बहस साहित्य में एक स्थायी तनाव बिंदु बन गई–क्या हम वास्तव में एक "महामारी" देख रहे हैं, या फिर मीडिया की अतिरंजना का शिकार हो रहे हैं[10]।

तीसरा कालखंड, 2018 के बाद का, अधिक सूक्ष्म और प्रासंगिक दृष्टिकोण अपनाता है। इस दौर के अध्ययन उपयोग की मात्रा के बजाय उपयोग की गुणवत्ता और प्रकार पर ध्यान केंद्रित करते हैं। वैलेंज़ुएला और उनके सहयोगियों ने सक्रिय बनाम निष्क्रिय सोशल मीडिया उपयोग के बीच अंतर किया, यह दर्शाते हुए कि दोस्तों के साथ सीधा संवाद सामाजिक भलाई को बढ़ा सकता है, जबकि केवल दूसरों की पोस्ट देखना सामाजिक

Global Journal of Sociology and Anthropology
Vol. 14 (1), pp. 01-07, December, 2025
ISSN: 2756-3456

तुलना और ईर्ष्या को जन्म दे सकता है[11]। इसी क्रम में, कोयने और उनकी टीम द्वारा किया गया आठ वर्षीय अनुदैर्घ्य अध्ययन विशेष रूप से उल्लेखनीय है, क्योंकि इसने यह दिखाया कि किशोरावस्था के दौरान सोशल मीडिया उपयोग में उतार-चढ़ाव मानसिक स्वास्थ्य में सार्थक परिवर्तन से जुड़ा नहीं पाया गया, जो पूर्व की धारणाओं को चुनौती देता है[12]।

आक्रामक व्यवहार के संदर्भ में, ग्रीटमेयर और मुगे का मेटा-विश्लेषण उल्लेखनीय है, जिसमें उन्होंने हिंसक वीडियो गेम्स के अल्पकालिक प्रभावों की पुष्टि की, परंतु दीर्घकालिक व्यवहार परिवर्तन के प्रमाण को कमज़ोर पाया। इसके विपरीत, प्रीज़ीबाइल्स्की के 2019 के अध्ययन ने वास्तविक-विश्व डेटा के आधार पर तर्क दिया कि हिंसक गेम्स खेलने और वास्तविक आक्रामक व्यवहार के बीच कोई सार्थक संबंध नहीं मिलता, बशर्ते कि पारिवारिक तनाव जैसे कारकों को नियंत्रित किया जाए। भारतीय संदर्भ में, शर्मा और वर्मा के अध्ययन ने शहरी किशोरों में स्मार्टफोन की लत और चिड़चिड़ेपन के बीच सहसंबंध पाया, हालांकि इस अध्ययन का नमूना आकार सीमित था और यह केवल दो महानगरों तक सीमित रहा[13]।

सामाजिक समायोजन के क्षेत्र में, नेस्सी और उनके सहयोगियों का कार्य महत्वपूर्ण है, जिन्होंने यह दिखाया कि साइबरबुलिंग का अनुभव—जो मल्टीमीडिया प्लेटफॉर्म्स पर आम है—सामाजिक चिंता और अलगाव की भावना को काफी बढ़ा देता है। वहीं, बेस्ट और उनकी टीम ने यह भी पाया कि ऑनलाइन समुदायों में भागीदारी, विशेषकर उन किशोरों के लिए जो हाशिए पर हैं (जैसे एलजीबीटीक्यू समुदाय के किशोर), सामाजिक समर्थन और अपनेपन की भावना प्रदान कर सकती है। यह द्वंद्व साहित्य में बार-बार दोहराया गया है—मल्टीमीडिया न तो पूर्णतः हानिकारक है, न ही पूर्णतः लाभकारी, बल्कि इसका प्रभाव संदर्भ, उपयोग के प्रकार और व्यक्तिगत भेद्यता पर निर्भर करता है[14]।

कुल मिलाकर, साहित्य से यह स्पष्ट होता है कि यद्यपि प्रारंभिक शोध ने प्रत्यक्ष कारण-प्रभाव संबंध स्थापित करने का प्रयास किया, परंतु समय के साथ अनुसंधान अधिक जटिल, बहु-कारक मॉडल की ओर बढ़ा है, जिसमें मध्यस्थ और नियंत्रक चरों (जैसे पारिवारिक वातावरण, व्यक्तित्व लक्षण, और सांस्कृतिक संदर्भ) को महत्व दिया जाने लगा है[15]।

3. शोध पद्धति

यह अध्ययन एक व्यवस्थित समीक्षा (सिस्टेमेटिक रिव्यू) दृष्टिकोण अपनाता है, जिसमें 2005 से 2024 के बीच प्रकाशित शोधपत्रों का विश्लेषण किया गया। डेटा संग्रहण के लिए स्कोपस, वेब ऑफ साइंस, पबमेड और गूगल स्कॉलर जैसे डेटाबेस का उपयोग किया गया, जिसमें "मल्टीमीडिया एवं किशोर मानसिक स्वास्थ्य", "स्क्रीन-टाइम एवं आक्रामकता", तथा "सोशल मीडिया एवं सामाजिक समायोजन" जैसे कीवर्ड संयोजनों का प्रयोग किया गया। प्रारंभिक खोज में कुल 412 शोधपत्र प्राप्त हुए, जिनमें से शीर्षक और सारांश की समीक्षा के आधार पर 156 को आगे के विश्लेषण हेतु चुना गया[16]।

समावेशन मापदंड में वे अध्ययन शामिल किए गए जो 10 से 19 वर्ष आयु वर्ग के किशोरों पर केंद्रित थे, अंग्रेजी भाषा में प्रकाशित थे, और सहकर्मी-समीक्षित (पीयर-रिव्यूड) जर्नल्स में छपे थे। जिन अध्ययनों में नमूना आकार 50 से कम था या जो केवल गुणात्मक अवलोकन पर आधारित थे, उन्हें बहिष्कृत किया गया। अंततः 62 शोधपत्रों को विस्तृत विश्लेषण के लिए चुना गया, जिनमें अनुदैर्घ्य अध्ययन, अनुप्रस्थ-कालिक सर्वेक्षण और मेटा-विश्लेषण तीनों प्रकार शामिल हैं[17]। विश्लेषण की प्रक्रिया में प्रत्येक अध्ययन को तीन मापदंडों पर वर्गीकृत किया गया—प्रभाव का क्षेत्र (मानसिक स्वास्थ्य, सामाजिक समायोजन, या आक्रामकता), पद्धतिगत दृष्टिकोण (सर्वेक्षण, प्रयोगात्मक, या अनुदैर्घ्य), तथा सांस्कृतिक संदर्भ (पश्चिमी बनाम गैर-पश्चिमी नमूने)। इस वर्गीकरण से प्राप्त पैटर्न को थीमेटिक विश्लेषण के माध्यम से संश्लेषित किया गया, जिससे साहित्य में मौजूद

Global Journal of Sociology and Anthropology
Vol. 14 (1), pp. 01-07, December, 2025
ISSN: 2756-3456

प्रवृत्तियों, विरोधाभासों और शोध अंतरालों की पहचान संभव हुई[18]।

4. पूर्व कार्य का आलोचनात्मक विश्लेषण

पूर्व शोधों की गहन समीक्षा से कई महत्वपूर्ण पद्धतिगत सीमाएँ सामने आती हैं जो निष्कर्षों की विश्वसनीयता को प्रभावित करती हैं। सबसे प्रमुख समस्या आत्म-रिपोर्टेड डेटा पर अत्यधिक निर्भरता है। अधिकांश अध्ययन, जैसे ट्वेंग का कार्य, किशोरों से स्वयं अपने स्क्रीन-टाइम का अनुमान लगाने को कहते हैं, जो वास्तविक उपयोग से काफी भिन्न हो सकता है[19]। पार्री और उनके सहयोगियों के एक तुलनात्मक अध्ययन ने दिखाया कि आत्म-रिपोर्टेड और वास्तविक फोन-ट्रैकिंग डेटा के बीच सहसंबंध बेहद कमज़ोर है, जो इस पद्धति की विश्वसनीयता पर गंभीर प्रश्न खड़े करता है[20]।

दूसरी बड़ी सीमा अनुप्रस्थ-कालिक (क्रॉस-सेक्शनल) डिज़ाइन का अत्यधिक प्रयोग है। अधिकांश प्रारंभिक अध्ययन एक ही समय-बिंदु पर डेटा एकत्र करते हैं, जिससे कारण और प्रभाव की दिशा निर्धारित करना असंभव हो जाता है[21]। क्या अत्यधिक स्क्रीन उपयोग अवसाद का कारण बनता है, या फिर पहले से अवसादग्रस्त किशोर स्क्रीन की ओर आकर्षित होते हैं–यह प्रश्न इन अध्ययनों से अनुत्तरित रह जाता है। कोयने का अनुदैर्घ्य अध्ययन इस समस्या को आंशिक रूप से संबोधित करता है, परंतु ऐसे अध्ययन साहित्य में अल्पसंख्यक हैं[22]।

तीसरी सीमा सांस्कृतिक विविधता की उपेक्षा है। अधिकांश बड़े पैमाने के अध्ययन उत्तरी अमेरिका और पश्चिमी यूरोप के नमूनों पर आधारित हैं। भारत, अफ्रीका और दक्षिण-पूर्व एशिया जैसे क्षेत्रों से प्राप्त डेटा अपेक्षाकृत सीमित है, जबकि यहाँ पारिवारिक संरचना, सामाजिक अपेक्षाएँ और डिजिटल पहुंच के पैटर्न पश्चिमी संदर्भ से काफी भिन्न हैं[23]। शर्मा और वर्मा जैसे भारतीय अध्ययन मौजूद तो हैं, परंतु इनका नमूना आकार और भौगोलिक विस्तार सीमित रहा है, जिससे व्यापक सामान्यीकरण कठिन हो जाता है।

चौथी समस्या प्रभाव आकार की अतिशयोक्ति है। ओर्बेन और प्रज़ीबाइल्स्की के पुनर्विश्लेषण ने दिखाया कि कई प्रारंभिक अध्ययनों में सांख्यिकीय रूप से महत्वपूर्ण परंतु व्यावहारिक रूप से नगण्य सहसंबंधों को मीडिया में अतिरंजित रूप से प्रस्तुत किया गया। यह "प्रकाशन पूर्वाग्रह" की समस्या को भी उजागर करता है–जो अध्ययन नकारात्मक या शून्य परिणाम पाते हैं, वे अक्सर प्रकाशित होने में असफल रहते हैं, जिससे साहित्य में एक विषम चित्र बनता है[24]।

अंततः, हिंसक कंटेंट और आक्रामकता के संबंध में अध्ययन प्रायोगशाला-आधारित प्रयोगों पर अत्यधिक निर्भर रहे हैं, जो वास्तविक जीवन की जटिलता को पूरी तरह प्रतिबिंबित नहीं करते। एंडरसन के प्रयोगों में आक्रामकता को अक्सर शोर के स्तर या प्रतिक्रिया समय जैसे प्रॉक्सी माप द्वारा मापा गया, जो वास्तविक हिंसक व्यवहार से काफी दूर है। इस पद्धतिगत सीमा के कारण, प्रयोगशाला परिणामों को वास्तविक-विश्व व्यवहार पर सीधे लागू करना वैज्ञानिक रूप से समस्याग्रस्त है[25]।

5. विवेचना

उपरोक्त साहित्य समीक्षा से यह स्पष्ट होता है कि मल्टीमीडिया और किशोर विकास के बीच संबंध रैखिक नहीं, बल्कि बहु-आयामी है[26]। मानसिक स्वास्थ्य पर प्रभाव उपयोग की मात्रा से अधिक उपयोग की प्रकृति और संदर्भ पर निर्भर करता है–सक्रिय, उद्देश्यपूर्ण उपयोग सकारात्मक परिणाम दे सकता है, जबकि निष्क्रिय, तुलनात्मक उपयोग नकारात्मक भावनाओं को बढ़ावा दे सकता है[27]। इसी प्रकार, आक्रामकता के संदर्भ में, हिंसक कंटेंट का अल्पकालिक प्रभाव तो प्रमाणित है, परंतु दीर्घकालिक व्यवहार परिवर्तन के प्रमाण अभी भी अनिर्णायक बने हुए हैं।

एक महत्वपूर्ण अंतर्दृष्टि यह है कि मध्यस्थ कारक–जैसे पारिवारिक संचार, माता-पिता की निगरानी, और व्यक्तिगत भावनात्मक स्थिरता–मल्टीमीडिया के प्रभाव को काफी हद तक निर्धारित करते हैं[28]। जो किशोर पहले से ही सामाजिक या भावनात्मक चुनौतियों का

सामना कर रहे हैं, उनके लिए मल्टीमीडिया के नकारात्मक प्रभाव अधिक स्पष्ट रूप से दिखते हैं, जबकि स्थिर पारिवारिक वातावरण वाले किशोरों में यह प्रभाव न्यूनतम हो सकता है। यह निष्कर्ष नीति-निर्माताओं और अभिभावकों दोनों के लिए महत्वपूर्ण है, क्योंकि यह केवल स्क्रीन-टाइम सीमित करने के बजाय समग्र पारिवारिक और सामाजिक हस्तक्षेप की आवश्यकता को रेखांकित करता है[29]।

भारतीय संदर्भ में, जहाँ संयुक्त परिवार व्यवस्था और सामुदायिक जीवन अभी भी प्रभावी हैं, मल्टीमीडिया के प्रभाव पश्चिमी अध्ययनों से भिन्न हो सकते हैं। इस दिशा में अधिक स्थानीय अनुसंधान की आवश्यकता है, विशेषकर ग्रामीण और अर्ध-शहरी क्षेत्रों में, जहाँ डिजिटल पहुँच तेज़ी से बढ़ रही है परंतु डिजिटल साक्षरता अभी भी सीमित है[30]।

6. निष्कर्ष

इस समीक्षा शोधपत्र ने मल्टीमीडिया के किशोर मानसिक स्वास्थ्य, सामाजिक समायोजन और आक्रामक व्यवहार पर प्रभाव संबंधी साहित्य का व्यापक विश्लेषण प्रस्तुत किया है। निष्कर्षों से स्पष्ट होता है कि यह संबंध जटिल और बहु-कारकीय है, जिसे किसी एक सरल कारण-प्रभाव मॉडल से नहीं समझा जा सकता। उपयोग की मात्रा से अधिक उपयोग की गुणवत्ता, पारिवारिक संदर्भ और व्यक्तिगत भेद्यता जैसे कारक निर्णायक भूमिका निभाते हैं। भविष्य के शोध को अनुदैर्घ्य पद्धतियों, वस्तुनिष्ठ मापन उपकरणों, तथा गैर-पश्चिमी सांस्कृतिक संदर्भों को अधिक प्राथमिकता देनी चाहिए। साथ ही, नीति-निर्माण में केवल स्क्रीन-टाइम प्रतिबंध के बजाय डिजिटल साक्षरता, पारिवारिक संवाद और भावनात्मक समर्थन को बढ़ावा देने वाले समग्र दृष्टिकोण की आवश्यकता है।

7. संदर्भ सूची

[1] जे. ट्वेंगे और डब्ल्यू.के. कैंपबेल, "बच्चों और किशोरों में स्क्रीन टाइम और कम मनोवैज्ञानिक कल्याण के बीच संबंध," प्रिवेंटिव मेडिसिन रिपोर्ट्स, खंड 12, पृष्ठ 271-283, 2018।

[2] ए. ऑर्बेन और एके. प्रिज़िबिलस्की, "किशोर कल्याण और डिजिटल प्रौद्योगिकी उपयोग के बीच संबंध," नेचर ह्यूमन बिहेवियर, खंड 3, संख्या 2, पृष्ठ 173-182, 2019।

[3] सी.ए. एंडरसन और बी.जे. बुशमैन, "हिंसक वीडियो गेम का आक्रामक व्यवहार पर प्रभाव," साइकोलॉजिकल साइंस, खंड 12, संख्या 5, पृष्ठ 353-359, 2001।

[4] सी.जे. फर्ग्यूसन, "क्या एंग्री बर्ड्स बच्चों को गुस्सैल बनाते हैं? वीडियो गेम के प्रभावों का एक मेटा-विश्लेषण," पर्सपेक्टिव्स ऑन साइकोलॉजिकल साइंस, खंड 10, संख्या 5, पृ. 646-666, 2015.

[5] एस.ई. कोयने एट अल., "क्या सोशल मीडिया के उपयोग में बिताया गया समय मानसिक स्वास्थ्य को प्रभावित करता है?: एक आठ वर्षीय अनुदैर्घ्य अध्ययन," कंप्यूटर्स इन ह्यूमन बिहेवियर, खंड 104, 2020, लेख संख्या 106160.

[6] जे. वैलेंज़ुएला, एस. हैल्पर्न, और जे. कैट्ज़, "सोशल नेटवर्क साइट्स, वैवाहिक कल्याण और तलाक: सर्वेक्षण और प्रयोगात्मक साक्ष्य," कंप्यूटर्स इन ह्यूमन बिहेवियर, खंड 36, पृ. 94-101, 2014.

[7] टी. ग्रेइटेमेयर और डी.ओ. मुगे, "वीडियो गेम सामाजिक परिणामों को प्रभावित करते हैं: एक मेटा-विश्लेषणात्मक समीक्षा," पर्सनैलिटी एंड सोशल साइकोलॉजी बुलेटिन, खंड 40, संख्या 5, पृ. 578-589, 2014.

[8] एके प्रिज़िबिलस्की और एन. वेनस्टीन, "हिंसक वीडियो गेम में संलग्नता किशोरों के आक्रामक व्यवहार से संबंधित नहीं है," रॉयल सोसाइटी ओपन साइंस, खंड 6, संख्या 2, 2019, लेख संख्या 171474.

[9] आर. शर्मा और पी. वर्मा, "भारत में शहरी किशोरों में स्मार्टफोन की लत और चिड़चिड़ापन," इंडियन जर्नल ऑफ साइकियाट्री, खंड 60, संख्या 3, पृ. 302-307, 2018.

[10] आरएम नेसी, एस. चौकास-ब्रैडली, और एमजे प्रिंस्टीन, "सोशल मीडिया संदर्भ में किशोर सहकर्मी

संबंधों का परिवर्तन," क्लिनिकल चाइल्ड एंड फैमिली साइकोलॉजी रिव्यू, खंड 21, संख्या 3, पृ. 267-294, 2018.

[11] के.एम. बेस्ट, के.बी. मैनकटेलो, और बी. टेलर, "ऑनलाइन संचार, सोशल मीडिया और किशोर कल्याण: एक व्यवस्थित कथात्मक समीक्षा," चिल्ड्रन एंड यूथ सर्विसेज रिव्यू, खंड 41, पृ. 27-36, 2014.

[12] एम. पैरी एट अल., "स्व-रिपोर्ट और डिवाइस-लॉग किए गए स्मार्टफोन उपयोग के बीच विसंगतियों की एक व्यवस्थित समीक्षा और मेटा-विश्लेषण," नेचर ह्यूमन बिहेवियर, खंड 5, पृ. 1535-1547, 2021.

[13] जे. ट्वेंगे, आईजेन: आज के सुपर-कनेक्टेड बच्चे कम विद्रोही क्यों हो रहे हैं। न्यूयॉर्क, एनवाई, यूएसए: एट्रीया बुक्स, 2017.

[14] एस. लिविंगस्टोन और ई. हेल्स्पर, "किशोरों द्वारा इंटरनेट के उपयोग में अवसरों और जोखिमों को संतुलित करना," न्यू मीडिया एंड सोसाइटी, खंड. 12, नं. 2, पृ. 309-329, 2010.

[15] ई. क्रॉस एट अल., "फेसबुक का उपयोग युवा वयस्कों में व्यक्तिपरक कल्याण में गिरावट की भविष्यवाणी करता है," पीएलओएस वन, खंड 8, नं. 8, 2013, e69841.

[16] एम. कुस और एमडी ग्रिफिथ्स, "ऑनलाइन सोशल नेटवर्किंग और लत–मनोवैज्ञानिक साहित्य की समीक्षा," इंटरनेशनल जर्नल ऑफ एनवायरनमेंटल रिसर्च एंड पब्लिक हेल्थ,खंड 8, संख्या 9, पृष्ठ 3528-3552, 2011.

[17] ए. ओफिर, सी. एस्टरहान, और बी. श्वार्ज़, "किशोरावस्था अवसाद, सामाजिक अस्वीकृति और उत्पीड़न के डिजिटल पदचिह्न," कंप्यूटर्स इन ह्यूमन बिहेवियर, खंड 91, पृष्ठ 62-71, 2019.

[18] डी. क्रेग एट अल., "साइबरबुलिंग और किशोर मानसिक स्वास्थ्य परिणामों के साथ इसका संबंध," जर्नल ऑफ एडोलसेंस, खंड 79, पृष्ठ 87-97, 2020.

[19] एन. सेल्विन, "डिजिटल विभाजन या डिजिटल निर्णय? कंप्यूटर के गैर-उपयोगकर्ताओं और कम-उपयोगकर्ताओं का एक अध्ययन," पोएटिक्स, खंड 34, संख्या 4-5, पृ. 273-292, 2006.

[20] डब्ल्यू. होलिंगडेल और सी. ग्रेइटेमेयर, "आक्रामकता का बदलता चेहरा: एक हिंसक वीडियो गेम में वैयक्तिकृत अवतारों का आक्रामक व्यवहार के स्तर पर प्रभाव," जर्नल ऑफ एप्लाइड सोशल साइकोलॉजी, खंड 44, संख्या 9, पृ. 596-601, 2014.

[21] एस. लिविंगस्टोन, "बच्चों द्वारा इंटरनेट का उपयोग: उभरते शोध एजेंडा पर विचार," न्यू मीडिया एंड सोसाइटी, खंड 5, संख्या 2, पृष्ठ 147-166, 2003.

[22] एम. जेंटाइल एट अल., "युवाओं में रोग संबंधी वीडियो गेम का उपयोग: एक दो-वर्षीय अनुदैर्ध्य अध्ययन," पीडियाट्रिक्स, खंड 127, संख्या 2, पृष्ठ e319-e329, 2011.

[23] जे. किम, "यूट्यूब का संस्थागतकरण: उपयोगकर्ता-जनित सामग्री से पेशेवर रूप से जनित सामग्री तक," मीडिया, कल्चर एंड सोसाइटी, खंड 34, संख्या 1, पृ. 53-67, 2012.

[24] एन. कुमार और एस. भाटिया, "टियर-II भारतीय शहरों में किशोर व्यवहार पर डिजिटल मीडिया का प्रभाव," जर्नल ऑफ इंडियन एसोसिएशन फॉर चाइल्ड एंड एडोलसेंट मेंटल हेल्थ, खंड 16, संख्या 1, पृ. 45-58, 2020.

[25] आर. लेनहार्ट एट अल., "किशोर, सोशल मीडिया और प्रौद्योगिकी अवलोकन," प्यू रिसर्च सेंटर रिपोर्ट, 2015.

[26] ई. वैंडवाटर, डी. बिकहम, और जे. ली, "समय का सदुपयोग? टेलीविजन के उपयोग को बच्चों की खाली समय की गतिविधियों से जोड़ना," पीडियाट्रिक्स, खंड 117, संख्या. 2, पृ. e181-e191, 2006.

[27] एस. राइडआउट, "जेनरेशन एम2: 8 से 18 वर्ष के बच्चों के जीवन में मीडिया," कैसर फैमिली फाउंडेशन रिपोर्ट, 2010.

[28] ए. बंदुरा, सामाजिक अधिगम सिद्धांत। एंगलवुड क्लिफ्स, एनजे, यूएसए: प्रेंटिस हॉल, 1977.

[29] डी. बकिंघम, मीडिया शिक्षा: साक्षरता, अधिगम और समकालीन संस्कृति। कैम्ब्रिज, यूके: पॉलिटी प्रेस, 2003.

[30] पी. वाल्कनबर्ग और जे. पीटर, "किशोरों के लिए इंटरनेट के सामाजिक परिणाम: एक दशक का शोध," करंट डायरेक्शंस इन साइकोलॉजिकल साइंस, खंड 18, संख्या 1, पृष्ठ 1-5, 2009.